Con. 3. XI.12.49
320

अंक 11
संख्या 12

शनिवार
26 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

राज्य सम्बन्धी घोषणा 4231
संविधान का मसौदा–(जारी) 4231–51

भारतीय संविधान सभा

शनिवार, 26 नवम्बर, सन् 1949

भारतीय संविधान-सभा, कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः दस बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

राज्य सम्बन्धी घोषणा

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि राज्यों की स्थिति के सम्बन्ध में सरदार पटेल को कुछ घोषणा करनी है। प्रस्ताव पर औपचारिक रूप में मत लेने के लिये प्रस्तुत करने से पूर्व मैं उनसे घोषणा करने के लिये निवेदन करूंगा।

***माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल** (बम्बईः जनरल): श्रीमान, मुझे एक संक्षिप्त घोषणा करनी है। जैसा कि माननीय सदस्यों को याद होगा कि नये संविधान के अधीन राज्यों की स्थिति पर 12 अक्टूबर को जो विवरणपूर्ण वक्तव्य मैंने दिया था उसमें मैंने माननीय सदस्यों को उस प्रक्रिया से परिचित कराया था जिसको हमने राज्यों द्वारा इस संविधान की स्वीकृति के सम्बन्ध में विचारा था। मैं प्रसन्नतापूर्वक सभा को यह सूचना देता हूं कि हैदराबाद राज्य के सहित इस संविधान की प्रथम अनुसूची के भाग ख में उल्लिखित समस्त नौ राज्यों ने 12 अक्टूबर को दिये गये मेरे वक्तव्य में इंगित रीति के अनुसार इस संविधान को स्वीकार करना प्रकट किया है जिसे यह सभा इस समय स्वीकार करने वाली है।

संविधान का मसौदा-(जारी)

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान, मैं यह जानना चाहूंगा कि क्या आप यह उद्घोषणा करने वाले हैं कि आया 'बन्देमातरम्' हमारा राष्ट्रीय गान होगा तथा हमारा राष्ट्रीयगान क्या होना चाहिये।

***अध्यक्षः** इस समय मैं कोई घोषणा नहीं करूंगा। यदि आवश्यक हुआ तो बाद में जब हम जनवरी में समवेत होंगे यह सभा इस विषय पर विचार करेगी।

दो सज्जनों से मुझे संवाद प्राप्त हुये हैं उनमें से एक तो इस सभा के सदस्य थे और दूसरे अब तक सदस्य हैं। पहला संदेश हिज़ एक्सेलेन्सी श्री श्रीप्रकाश जी का है:

"स्वयं राष्ट्र द्वारा निर्मित स्वतंत्रता के अधिकार पत्र को प्रमाणित करते हुये अध्यक्ष की मुहर लगने के इस पवित्र तथा शुभ अवसर पर हार्दिक तथा सम्मानपूर्ण बधाई। हार्दिक प्रार्थना है कि सच्ची सेवा करने के लिये जो अवसर

[अध्यक्ष]

हमें प्राप्त हो रहे हैं उन अवसरों का अपनी इच्छानुकूल उपयोग करते हुये हम स्वतंत्रता के योग्य बनें और इस संविधान में निष्ठा रखें—श्री प्रकाश।"

दूसरा संवाद श्री सच्चिदानन्द सिन्हा का है:

"यदि हो सके तो कृपया मेरा यह संदेश सभा को दे दीजिये। यद्यपि दिसम्बर 1946 में प्रथम अध्यक्ष के रूप में कार्रवाई के उद्घाटन करने का विशेषाधिकार मुझे प्राप्त हुआ था, पर लगातार अस्वस्थ रहने के कारण कल कार्रवाइयों की समाप्ति के समय मैं भाग न ले सकूंगा। मैंने बड़ी रुचि तथा सहानुभूतिपूर्वक इस संविधान निर्माण कार्य को समझा है और यह स्मरण रखते हुये कि इस संसार में न कोई वस्तु पूर्ण है और न हो सकती है या न कोई वस्तु सबको प्रसन्न कर सकती है तथा इन प्रत्यक्ष तथ्यों को भी याद रखते हुये कि जिस क्षेत्र के लिये संविधान बनाया गया है वह एक विशाल क्षेत्र है और उसमें करोड़ों की अपार जनसंख्या है जिसमें अनेक भाषायें हैं और अनेक भिन्न-भिन्न हितों में परस्पर संघर्ष हैं, इस कारण आश्चर्य नहीं कि कई समस्यायें हल ही न हो पाई हों। पर मेरे लिये यह एक बड़ी आश्चर्जनक बात है कि सब विषयों में इतनी एकता तथा पूर्णरूपता आ गई है कि इसके कारण सभा की सद्भावना का उच्चतमरूप प्रदर्शित होता है और एक नीतिवान अध्यक्ष के रूप में आपके लिये भी यह कोई कम प्रशंसा की बात नहीं है। सभा का सबसे प्राचीन सदस्य होने के नाते मैं उस करुणामयी भगवती से प्रार्थना करता हूं कि आपका यह श्रम पूर्ण सफलता से सुशोभित हो और भारत की प्राचीन ऐतिहासिक भूमि राष्ट्रों में पुनः महान तथा यशपूर्ण स्थान ग्रहण करें—सच्चिदानन्द सिन्हा।"

श्री अलगू राय शास्त्री: सभापति जी, इससे पहले कि आप आगे की कार्रवाई करें मैं आपसे एक निवेदन करना चाहता हूं वह यह है कि इस विधान का हिन्दी भाषान्तर कब आयेगा और किस रूप में आयेगा। उस दिन मैंने कहा था कि 26 जनवरी से पहले जब हम लोग मिलें तो 2 या 3 दिन का समय लेकर उस भाषान्तर पर समान रूप से वाद-विवाद यहां पर हो जाय और असेम्बली की मोहर उस पर लगा दी जाये। क्या आप मेरी इस विनम्र प्रार्थना पर ध्यान दे रहे हैं? आपको स्मरण होगा कि आपने स्वयं यह कहा था कि हमारे राष्ट्र का विधान हमारी राष्ट्र भाषा में बनाया जायेगा मगर अब तक आपने कोई निश्चित बात इस सम्बन्ध में घोषित नहीं की है। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में कोई घोषणा कर देनी चाहिये। हम यहां पर दो तीन रोज बैठकर अपनी राष्ट्रभाषा में विधान को स्वीकार कर सकते हैं। हमको देश की भाषा में उसका विधान पास करना चाहिये। यह भाषा जनता की भाषा नहीं है। कामन-मैन की भाषा नहीं है। इसलिये मैं आपसे यह निवेदन भारत की राष्ट्रीयता के नाम पर और भारत की जनता के नाम पर करना चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में आप कोई निश्चित घोषणा आज करें।

अध्यक्ष: आपको मालूम होगा कि इस विधान के अन्दर कई धारायें इस सम्बन्ध की पास की गई हैं जिनमें यह तय किया गया है कि हमारे देश के सरकारी

काम के लिये कौन सी भाषा होगी। इसमें यह भी तय किया गया है कि 15 वर्ष तक हमारा सरकारी काम, अखिल भारतीय सरकारी काम—सब अंग्रेज़ी द्वारा किया जायेगा। और अगर ज़रूरत पड़ेगी और मौका होगा तो हिन्दी को भी स्थान दिया जायेगा। इस वक्त आप हिन्दी में विधान तैयार करके और उसे सारी सभा के सामने रखकर पास करना शायद मुमकिन नहीं होगा। इसके अलावा कान्स्टीटुएन्ट असेम्बली ने खुद एक प्रस्ताव पास किया है जिसमें उसने मुझे आदेश दिया है कि विधान का हिन्दी भाषान्तर मैं 26 जनवरी से पहले प्रकाशित कर दूं। मैं उसका प्रबन्ध कर रहा हूं और 26 जनवरी के पहले वह भाषान्तर प्रकाशित हो जायेगा।

दूसरी भाषाओं में जहां तक हो सकेगा मैं तर्जुमा करके जल्दी से जल्दी प्रकाशित कराऊंगा। इसलिये अब इस वक्त मौका नहीं है कि हम हिन्दी में विधान तैयार करवायें और उस पर यहां बहस करके उसको मंजूर करवायें।

श्री आर.वी. धुलेकर (यू.पी. : जनरल): क्या उस पर हमारे हस्ताक्षर हो सकेंगे जब कि कान्स्टीटुएन्ट असेम्बली उसको यहां पर पास कर देगी?

अध्यक्ष: मैं नहीं जानता कि असेम्बली के सब सदस्य इस बात के लिये तैयार होंगे कि इस भाषान्तर को पास कर दें क्योंकि भाषान्तर के हर एक शब्द को और हर एक जुम्ले को पूरी तरह से विचार करके उसको मंजूर किया जा सकता है। ऐसा करने में शायद उतना ही समय लगेगा जितना कि अंग्रेज़ी में पास करने में लगा है। इसलिये यह बात मुमकिन नहीं मालूम होती है। मगर भाषान्तर तैयार रहेगा।

श्री आर.वी. धुलेकर: मेरी यह प्रार्थना नहीं है कि 26 जनवरी को सभा द्वारा भाषान्तर पास किया जाये बल्कि यह तय किया जाये कि यह भाषान्तर आज से लागू होगा।

अध्यक्ष: वह भाषान्तर मेरी तरफ से प्रकाशित किया जायेगा। जिसकी जितनी कीमत होगी दुनिया उस पर लगायेगी।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव पर मत लेने से पूर्व मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

एक इतने बड़े महान कार्य को पूरा करने पर मैं इस सभा को बधाई देना चाहता हूं। मेरा प्रयोजन यह नहीं है कि इस सभा ने जो कार्य किया है उसका मैं मूल्य आंकूं अथवा जो संविधान इसने बनाया है उसके गुण और दोषों को बताऊं। इस कार्य को औरों पर तथा आगे आने वाली संतति पर छोड़ने में मुझे संतोष है। मैं केवल उसकी कुछ मुख्य बातें बताने तथा उस रीति को बताने का प्रयास करूंगा जिसका इस संविधान के निर्माण करने में हमने अनुसरण किया है।

ऐसा करने से पूर्व मैं कुछ उन तथ्यों का वर्णन करना चाहूंगा जो इस कार्य की महानता को प्रकट करेंगे जिसको हमने लगभग 3 वर्ष पूर्व हाथों में लिया

[अध्यक्ष]

था। यदि आप उस जनसंख्या का विचार करेंगे जिसका इस सभा को ध्यान रखना पड़ा तो आपको विदित होगा कि वह रूस रहित समस्त यूरोप की जनसंख्या से अधिक है। यह जनसंख्या 31 करोड़ 90 लाख है और रूस रहित यूरोप की जनसंख्या 31 करोड़ 70 लाख है। एक एकात्मक सरकार के अधीन आना तो दूर रहा यूरोप के देश कभी संगठित तक नहीं हो पाये हैं या एक संयुक्त मंडल (कान्फीडरेशन) तक नहीं बना पाये हैं। यहां जनसंख्या और देश के इतने बड़े आकार के होते हुये भी हम एक ऐसा संविधान बनाने में सफल हुए हैं जिसके अन्तर्गत सारा देश और सारी जनसंख्या आ जाती है। आकार के अतिरिक्त और भी कठिनाइयां थीं जो इस समस्या ही के अन्तर्गत थीं। हमारे यहां देश में कई सम्प्रदाय रहते हैं। हमारे यहां देश के भिन्न-भिन्न भागों में कई भाषायें प्रचलित हैं। हमारे यहां और भी अन्य प्रकार की भिन्नतायें हैं जो भिन्न-भिन्न भागों में मनुष्यों को परस्पर विभाजित करती हैं। हमें केवल उन क्षेत्रों के लिये ही उपबन्ध नहीं बनाने पड़े जो शैक्षणिक तथा आर्थिक रूप में उन्नत हैं; हमें जनजातियों जैसे पिछड़े लोगों के लिये भी तथा जनजाति क्षेत्रों के समान पिछड़े क्षेत्रों के लिये भी उपबन्ध बनाने पड़े। साम्प्रदायिक समस्या एक बहुत ही जटिल समस्या थी जो इस देश में एक अरसे से प्रचलित थी। दूसरा गोल-मेज सम्मेलन जिसमें महात्मा गांधी गये थे इसी कारण असफल हुआ कि साम्प्रदायिक समस्या हल न हो सकी। इसके बाद का देश का इतिहास इतना आधुनिक है कि उसके कहने की यहां आवश्यकता नहीं है। पर हम यह जानते हैं कि परिणामस्वरूप देश का विभाजन करना पड़ा और पूर्वोत्तर तथा पश्चिमोत्तर में हमारे देश में से दो भाग निकल गये।

दूसरी महान समस्या देशी राज्यों की समस्या थी। जब अंग्रेज़ भारत में आये तो उन्होंने सारे देश को एकदम एक ही बार नहीं जीता। वे समय समय पर थोड़ा थोड़ा करके उसको लेते चले गये। वे टुकड़े जो उनके प्रत्यक्ष कब्जे तथा नियंत्रण में आ गये ब्रिटिश भारत के नाम से ज्ञात हुये; परन्तु एक बड़ा भाग भारतीय राजाओं के शासन तथा नियंत्रण में रहा। उस समय अंग्रेज़ों ने यह सोचा कि यह उनके लिये आवश्यक तथा लाभदायक नहीं है कि उन राज्य-क्षेत्रों पर प्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण रखें और इस कारण उन्होंने पुराने शासको को अपनी (अंग्रेज़ों की) प्रभुता के अधीन बने रहने दिया। पर उन्होंने उनसे भिन्न-भिन्न प्रकार की संधियां कीं और सम्बन्ध स्थापित किये। हमारे यहां लगभग छः सौ रियासतें थीं जो भारत के राज्य-क्षेत्र के तिहाई भाग से अधिक भाग को घेरे हुये थीं और जिनमें देश की एक चौथाई जनसंख्या थी। छोटे-छोटे ठिकानों से लेकर मैसूर, हैदराबाद, काश्मीर इत्यादि बड़ी-बड़ी रियासतों तक वे भिन्न-भिन्न आकार प्रकार की थीं। जब अंग्रेज़ों ने इस देश को छोड़ना निश्चित किया तो उन्होंने हमको शक्ति दी, पर इसके साथ-साथ उन्होंने यह भी घोषणा की, राज्यों से जो संधियां या सम्बन्ध उनके थे वे सब भंग हो गये। वह प्रभुता भी मिट गई जिसका वे इतने काल तक प्रयोग करते रहे और जिससे वे शासकों को व्यवस्थानुसार चला सकते थे। इस समय भारतीय सरकार को इन राज्यों से सुलझने की समस्या का सामना करना पड़ा जिनमें

भिन्न-भिन्न प्रकार की शासन व्यवस्थायें थीं, कुछ राज्यों की सभाओं में लोकप्रिय प्रतिनिधान का कुछ रूप था और कुछ में ऐसी कोई बात न थी और उन पर पूर्णतया स्वतन्त्र शासन था।

इस घोषणा के परिणामस्वरूप कि देशी राजाओं के साथ संधियां और उन पर प्रभुता भंग हो गई थी। किसी राजा या राजाओं के गुट को यह अधिकार मिल गया था कि वे स्वाधीन हो जायें और यहां तक कि किसी विदेशी शक्ति से संधि सम्बन्धी बातचीत भी करें और इस प्रकार इस देश में स्वाधीन राज्य क्षेत्र के भागों की स्थापना हो। यद्यपि भौगोलिक अथवा अन्य ऐसी अनिवार्यतायें अवश्य थी जिनके कारण उन राज्यों में से अधिकांश के लिये यह नितान्त असंभव था कि वे भारत सरकार के विरुद्ध हो सकें पर संविधानिक रूप में ऐसा हो सकता था। अत: आरम्भ में ही उनके प्रतिनिधियों को सभा में लाने के लिये संविधान सभा को उनसे बातचीत करनी पड़ी जिससे कि उनसे परामर्श कर संविधान बनाया जा सके। प्रथम प्रयास में ही सफलता मिली और कुछ रियासतें शुरू ही में इस सभा में आ गईं पर कुछ रियासतें संकोच करती रहीं। यह आवश्यक नहीं है कि उन घटनाओं के गुप्त भेदों को खोला जाये जो उन दिनों परदे की आड़ में हो रही थीं। केवल यह कहना पर्याप्त होगा कि अगस्त 1947 तक जब कि स्वाधीनता अधिनियम प्रवृत्त हुआ लगभग सब रियासतें भारत में प्रवेश कर गईं सिवा दो उल्लेखनीय अपवादों के—उत्तर में काश्मीर और दक्षिण में हैदराबाद। काश्मीर ने तुरन्त ही अन्य राज्यों के उदाहरण का अनुसरण किया और प्रविष्ट हो गया। हैदराबाद सहित सब रियासतों से आगे कार्रवाई न करने (स्टैन्डस्टिल) के करार हुये और हैदराबाद की स्थिति पूर्ववत बनी रही। जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया यह स्पष्ट होता गया कि छोटे-छोटे राज्यों के लिये अपनी पृथक स्वाधीन सत्ता रखना किसी प्रकार संभव नहीं था अत: भारत में सम्मिलित होने का कार्य आरम्भ हुआ। कुछ समय में केवल छोटी-छोटी रियासतें ही भारत के किसी न किसी प्रान्त से मिलकर एक नहीं हो गई वरन् कुछ बड़ी बड़ी रियासतें भी मिल गईं। बहुत सी रियासतों ने अपने संघ बना लिये और ये संघ भारतीय संघ के भाग बन गये हैं। यह कहना चाहिये कि रियासतों की जनता और शासकों को श्रेय प्राप्त है और सरदार पटेल के बुद्धिमत्तापूर्ण तथा दूरदर्शी पथप्रदर्शन के अधीन राज्य मंत्रालय के लिये भी यह कम श्रेय की बात नहीं है कि अब जब कि हम यह संविधान पारित कर रहे हैं रियासतों की स्थिति न्युनाधिक रूप में वही है जो कि प्रान्तों की है और देशी रियासतों और प्रान्तों के सहित सबका हम इस संविधान में राज्यों के रूप में वर्णन कर सके हैं। जो घोषणा सरदार पटेल ने अभी की है उससे स्थिति बहुत स्पष्ट हो गई है, और अब इस नये संविधान में रियासतों और प्रान्तों में वह अन्तर नहीं है जो पहले था।

इसमें सन्देह नहीं कि इस कार्य को पूरा करने में हमें तीन वर्ष लगे हैं, पर जब हम, जो काम पूरा हो चुका है उस पर और जो दिन इस संविधान के बनाने में हमने लगाये हैं उनकी संख्या पर, विचार करें—इसका विवरण कल डॉ. अम्बेडकर

[अध्यक्ष]

ने दिया था—तो जो समय हमने व्यतीत किया है उसके प्रति खेद करने के लिये कोई कारण नहीं मिल सकता है।

इसके कारण राज्यों की वह समस्या, जो न सुलझने वाली प्रतीत होती थी, और साम्प्रदायिक समस्या हल हो गई। जो बात गोल मेज सम्मेलन में न सुलझने वाली सिद्ध हुई थी और जिसके परिणाम स्वरूप देश का विभाजन हुआ वह सब सम्बद्ध पक्षों की सम्मति से हल कर ली गई है और यह कार्य भी माननीय सरदार पटेल के बुद्धिमतापूर्ण मार्गदर्शन के अधीन हुआ।

आरम्भ में हम पृथक निर्वाचक मंडलों से छुटकारा पा चुके थे जिन्होंने हमारे राजनैतिक जीवन को इतने वर्षों तक विषमय बना दिया था, पर उन सम्प्रदायों के लिये, जो पृथक निर्वाचक मंडलों का पहले उपभोग करते रहे थे स्थानों का रक्षण स्वीकार करना पड़ा और यह उनकी जनसंख्या के आधार पर है न कि जैसा 1919 के अधिनियम में और 1935 के अधिनियम में किया गया था कि उनको तत्कथित उन ऐतिहासिक तथा अन्य श्रेष्ठताओं के आधार पर अतिरिक्त प्रतिनिधान दिया गया था जिसका कुछ सम्प्रदाय दावा करते थे। यह केवल इसी कारण हो सका है कि संविधान जल्दी पारित नहीं हो पाया और इस समय में सम्बद्ध सम्प्रदायों ने स्थानरक्षण को भी छोड़ दिया अतः हमारे संविधान में साम्प्रदायिक आधार पर स्थानों के रक्षण की व्यवस्था नहीं है वरन् हमारी जनसंख्या में केवल दो प्रकार के लोगों के लिये रक्षण रखा गया है, अर्थात् दलित जातियां जो हिन्दू हैं और जनजाति के लोग जो शिक्षा तथा अन्य बातों में पिछड़े हुये हैं।

जिन बातों पर खर्च हुआ है यदि आप उन बातों पर विचार करें तो जो खर्च सभा ने अपने तीन वर्ष के जीवन में किया है वह बहुत अधिक नहीं है। मैं समझता हूं कि 22 नवम्बर तक 63,96,729 रुपया खर्च में आया है।

संविधान के सम्बन्ध में जिस रीति को संविधान सभा ने अपनाया वह यह थी कि सर्वप्रथम 'विचारणीय बातें' निर्धारित की जो कि लक्ष्य मूलक संकल्प के रूप में थीं जिसको एक ओजस्वी भाषण द्वारा पंडित जवाहरलाल नेहरू ने पेश किया था और जो अब हमारे संविधान की प्रस्तावना है। इसके बाद संविधानिक समस्याओं के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर विचार करने के लिये कई समितियां नियुक्त कीं। डॉ. अम्बेडकर ने इन समितियों के नामों का वर्णन किया था। इनमें से कई समितियों के सभापति या तो पंडित जवाहरलाल नेहरू होते थे या सरदार पटेल अतः इस प्रकार हमारे संविधान की मूलभूत बातों का श्रेय इन्हीं को है। मुझे केवल यही कहना है कि इन सब समितियों ने उचित और ठीक रीति से कार्य किया और अपने अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत किये जिन पर सभा ने विचार किया और उनकी सिफारिशों को उन आधारों के रूप में ग्रहण किया गया जिन पर संविधान का मसौदा तैयार किया गया था। यह कार्य श्री बी.एन. राउ ने किया जिन्होंने अपने

इस कार्य में अन्य देशों के संविधानों के पूर्ण ज्ञान और इस देश की दशा के व्यापक ज्ञान तथा अपने प्रशासी ज्ञान का भी पुट दिया। इसके बाद सभा ने मसौदा समिति नियुक्त की जिसने श्री बी.एन. राउ द्वारा निर्मित मूल मसौदे पर विचार किया और संविधान का मसौदा बनाया जिस पर द्वितीय पठन की स्थिति में इस सभा ने विस्तार पूर्वक विचार किया। जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने बताया था 7635 से कम संशोधन नहीं थे जिनमें से 2473 संशोधन पेश किये गये। मैं केवल यह सिद्ध करने के लिये यह कह रहा हूं कि केवल मसौदा समिति के सदस्य ही इस संविधान पर दत्तचित होकर अपना ध्यान नहीं दे रहे थे वरन् अन्य सदस्य भी सचेष्ठ थे ओर मसौदे की पूर्णरूप से जांच परख कर रहे थे। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मसौदे में केवल प्रत्येक अनुच्छेद पर ही नहीं वरन् लगभग प्रत्येक वाक्य पर और कभी-कभी तो प्रत्येक अनुच्छेद के प्रत्येक शब्द पर हमें विचार करना पड़ा। माननीय सदस्यों को यह जान कर खुशी होगी कि इस कार्यवाई में जनता बड़ी दिलचस्पी ले रही थी और मुझे यह विदित हुआ है कि जितने समय तक संविधान विचाराधीन रहा उस समय मैं 53,000 दर्शकों को दर्शक गैलरी में जाने दिया गया। परिणाम यह हुआ कि संविधान के मसौदे का आकार बढ़ गया और जब यह पारित हुआ तो श्री बी.एन. राउ के मूल मसौदे के 243 अनुच्छेद और 13 अनुसूचियों के स्थान में उसमें 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां हो गईं। मैं उस शिकायत को कोई महत्व नहीं देता हूं जो कभी कभी इस रूप में की जाती थी कि यह संविधान बहुत विशाल हो गया है। यदि उपबन्धों पर भली प्रकार से विचार कर लिया गया है तो इस बृहदाकर से हमारे चित्त की स्थिर वृत्ति में कोई विध्न नहीं पड़ना चाहिये।

अब हमें इस संविधान की मुख्य बातों पर विचार करना है। सबसे पहला प्रश्न यह है और इस पर वाद-विवाद हो चुका है कि यह संविधान किस श्रेणी का है। मैं स्वयं उस श्रेणी को कोई महत्व नहीं देता हूं जो इस संविधान को दी जायेगी—चाहे आप उसे फेडरल संविधान कहें या एकात्मक शासन तंत्र का संविधान कहें या और कुछ कहें। जब तक संविधान हमारे प्रयोजनों की पूर्ति करता है तब तक इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता है। हमारे लिये यह कोई बन्धन नहीं है कि हम एक ऐसा संविधान रखें जो संसार के संविधानों की ज्ञात श्रेणियों के पूर्णतया अनुरूप हो। हमें अपने देश के इतिहास के कुछ तथ्यों को लेना पड़ेगा और इतिहास के तथ्यों जैसी इन वास्तविकताओं का इस संविधान पर कोई कम प्रभाव नहीं पड़ा है।

आप सबको यह विदित है कि 1930 के गोल-मेज सम्मेलन तक भारत में पूर्णतया एकात्मक शासन व्यवस्था थी और प्रांतों को जो कुछ भी शक्तियां थी वे भारत सरकार से प्राप्त होती थीं। प्रथम बार फेडरेशन का प्रश्न व्यावहारिक रूप में उठा जिसके अन्तर्गत केवल प्रान्त ही नहीं रखे गये वरन् उन अनेक रियासतों को भी रखा जो उस समय वर्तमान थी। 1935 के संविधान में एक फेडरेशन की व्यवस्था की गई जिसमें सम्मिलित होने के लिये दोनों भारत के प्रान्तों और

[अध्यक्ष]

रियासतों से कहा गया। पर उस संविधान का फेडरल भाग प्रवर्त्तन में नहीं आ सका क्योंकि बहुत समय तक बातचीत करने पर भी ये बातें निश्चित न हो सकीं जिनके अनुसार शासक सम्मिलित होने के लिये सहमत हो सकते थे और जब युद्ध छिड़ गया तो संविधान के उस भाग का निराकरण करना पड़ा।

वर्तमान संविधान में लगभग उन सब रियासतों को जो हमारी भौगोलिक सीमाओं के भीतर हैं प्रविष्ट ही नहीं कराया गया है वरन् उनमें से अधिकांश को पूर्ण एकक के रूप में भारत में मिला दिया गया है, और जिस रूप में यह संविधान है इसमें जहां तक राज्य के विभिन्न एककों का सम्बन्ध है पहले जो प्रान्त थे और जो देशी रियासतें थी उनके आधार पर प्रशासन और शक्ति विभाजन के विषय में कोई अन्तर नहीं रखा गया है। न्यूनाधिक रूप में उनकी स्थिति अब समान वही है और कुछ समय बीतने पर जो कुछ थोड़ा सा अन्तर इस समय है वह भी मिट जायेगा। अतः जहां तक संविधान की श्रेणी का सम्बन्ध है हमें इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

सबसे पहला और अति स्पष्ट तथ्य जो किसी भी पर्यवेक्षक का ध्यान आकर्षित करेगा वह यह है कि हम एक गणराज्य बना रहे हैं। भारत में प्राचीन काल में गणराज्य थे, पर यह व्यवस्था 2000 वर्ष पूर्व थी इससे भी अधिक समय पूर्व थी और वे गणराज्य बहुत छोटे-छोटे थे। जिस गणराज्य की हम अब स्थापना कर रहे हैं उस गणराज्य जैसा गणराज्य हमारे यहां कभी नहीं था, यद्यपि उन दिनों में भी और मुगल काल में भी ऐसे साम्रान्य थे जो देश के विशाल भागों पर छाये हुये थे। इस गणराज्य का राष्ट्रपति एक निर्वाचित राष्ट्रपति होगा। हमारे यहां ऐसे बड़े राज्य का निर्वाचित मुखिया कभी नहीं हुआ जिसके अन्तर्गत भारत का इतना बड़ा क्षेत्र आ जाता है। और यह प्रथम बार ही हुआ है कि देश के तुच्छ से तुच्छ और निम्न से निम्न नागरिक को भी यह अधिकार मिल गया है कि वह इस महान राज्य के राष्ट्रपति या मुखिया के योग्य हो और बने जो आज संसार के विशालतम राज्यों में गिना जाता है। यह कोई छोटा विषय नहीं है। चूंकि हमारे यहां निर्वाचित राष्ट्रपति होगा कुछ ऐसी कुछ ऐसी समस्यायें खड़ी हो गई हैं जो बड़ी जटिल प्रकार की हैं। हमने राष्ट्रपति के निर्वाचन की व्यवस्था की है। हमने निर्वाचित विधान मंडल की व्यवस्था की है जिसको सर्वोच्च प्राधिकार प्राप्त होंगे। अमरीका में विधान-मंडल और राष्ट्रपति दोनों का निर्वाचन होता है और वहां दोनों को न्यूनाधिक रूप से समान शक्तियां होती हैं—प्रत्येक को अपने अपने क्षेत्र में, राष्ट्रपति को कार्यपालिका क्षेत्र में और विधान-मंडल को विधायी क्षेत्र में।

हमने विचार किया कि हम अमरीका का आदर्श ग्रहण करें या ब्रिटिश आदर्श जहां राजा वंशानुगत होता है और वह समस्त आदर और शक्ति का स्रोत है, पर जो वास्तव में किसी शक्ति का उपभोग नहीं करता। सब शक्तियां विधान-मंडल में निहित होती हैं और मंत्री विधान-मंडल के ही प्रति उत्तरदायी होते हैं। हमें

एक निर्वाचित राष्ट्रपति की स्थिति का एक निर्वाचित विधान-मंडल से मेल बिठाना था और ऐसा करने में हमने राष्ट्रपति के लिये न्यूनाधिक रूप में ब्रिटेन के बादशाह की स्थिति को अपनाया है। यह संतोषजनक हो या न हो। कुछ लोग सोचते हैं कि राष्ट्रपति को बहुत अधिक शक्तियां दे दी गई हैं; कुछ लोग सोचते हैं कि निर्वाचित राष्ट्रपति होने के कारण उसे जो शक्तियां दी गई हैं उनसे अधिक शक्तियां होनी चाहिये।

यदि आप इस विषय की ओर उस निर्वाचक-मंडल के दृष्टिकोण से ध्यान दें जो संसद् का निर्वाचन करता हैं और जो राष्ट्रपति का निर्वाचन करता है तो आपको विदित होगा कि देश की लगभग पूरी की पूरी वयस्क जनसंख्या संसद् के निर्वाचन करने में भाग लेती है और केवल भारत की इस संसद के सदस्य ही नहीं वरन् राज्यों की विधान सभाओं के सदस्य भी राष्ट्रपति के निर्वाचन करने में भाग लेते हैं। अतः परिणाम यह निकलता है कि संसद और विधान सभाओं का निर्वाचन देश की समूची वयस्क जनसंख्या द्वारा किया जाता है और राष्ट्रपति का निर्वाचन उन प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता है जो समस्त जनसंख्या का दो बार प्रतिनिधान करते हैं—एक बार राज्यों के प्रतिनिधि के रूप में और दूसरी बार देश की केन्द्रीय संसद में उसके प्रतिनिधि के रूप में। यद्यपि राष्ट्रपति का निर्वाचन उसी निर्वाचक-मंडल द्वारा किया जाता है जो केन्द्रीय और राज्य के विधान-मंडलों का निर्वाचन करता है परन्तु उसकी स्थिति एक संविधानिक राष्ट्रपति की स्थिति जैसी है।

इसके बाद हम मंत्रियों पर आते हैं। वे वास्तव में विधान-मंडल के प्रति उत्तरदायी हैं और राष्ट्रपति को मंत्रणा देंगे और राष्ट्रपति के लिये यह आवश्यक है कि उस मंत्रणा के अनुसार कार्य करे। जहां तक मैं जानता हूं यद्यपि स्वयं इस संविधान में ऐसे विशिष्ट उपबन्ध नहीं हैं जो राष्ट्रपति को अपने मंत्रियों की मंत्रणा स्वीकार करने के लिये बाध्य करते हों पर यह आशा की जाती है कि उस परम्परा को इस देश में भी स्थापित किया जायेगा जिसके अधीन इंग्लैंड का बादशाह सदैव अपने मंत्रियों की मंत्रणा के अनुसार चलता है और संविधान में लिखित शब्द के कारण नहीं वरन् इस कल्याणकारी परम्परा के फलस्वरूप राष्ट्रपति सब विषयों में एक संविधानिक राष्ट्रपति होगा।

केन्द्रीय विधान-मंडल में लोक सभा और राज्य-परिषद नाम से ज्ञात दो सदन होंगे जो मिलकर भारत की संसद का गठन करेंगे। सब प्रान्तों में जिनको अब राज्य कहा जायेगा हम विधान सभा रखेंगे सिवा उनके जिनका अनुसूची 1 के भाग ग और घ में वर्णन है, पर प्रत्येक राज्य में द्वितीय सदन नहीं होगा। कुछ प्रान्तों में, जिनके प्रतिनिधियों ने यह अनुभव किया कि उनके लिये द्वितीय सदन अपेक्षित हैं, द्वितीय सदन के लिये व्यवस्था कर दी गई है। परन्तु संविधान में एक ऐसा भी उपबन्ध है कि यदि कोई प्रान्त ऐसे द्वितीय सदन को बनाये रखना नहीं चाहता है या यदि कोई प्रान्त जिसमें द्वितीय सदन नहीं है वह द्वितीय सदन

[अध्यक्ष]

चाहता है तो यह इच्छा विधान-मंडल द्वारा मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से और विधान सभा के कुछ सदस्यों के बहुमत से प्रकट करनी होगी। अत: यद्यपि कुछ राज्यों के लिये द्वितीय सदनों की व्यवस्था करते हुये भी हमने उनको सरलता से मिटाने या सरलता से स्थापित करने की भी व्यवस्था संविधान में इस प्रकार का संशोधन करके की है और यह संशोधन कोई संविधानिक संशोधन नहीं है वरन् एक साधारण संसदीय विधान का विषय है।

हमने वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की है जिसके द्वारा प्रान्तों में विधान-सभाओं और केन्द्र में लोक सभा का निर्वाचन होगा। यह हमने एक बहुत बड़ा-कदम उठाया है यह केवल इस कारण ही बड़ा कदम नहीं है कि हमारा वर्त्तमान निर्वाचक-मंडल एक बहुत ही छोटा निर्वाचक-मंडल है और वह अधिकतर संपति-अर्हता पर आश्रित है; पर वह इस कारण भी बड़ा कदम है कि उसके अन्तर्गत एक बहुत बड़ी संख्या हो जाती है। हमारी जनसंख्या यदि अधिक नहीं तो लगभग 32 करोड़ है और मतदाताओं की सूचियां जो कि प्रान्तों में बनाई जा रही हैं उनके बनाने में जो अनुभव हमें हुआ उससे यह विदित हुआ है कि मोटे रूप में वयस्क जनसंख्या 50 प्रतिशत है और इस आधार से हमारी सूचियों में 16 करोड़ से कम मतदाता नहीं होंगे। इतनी बड़ी संख्या में मतदाताओं द्वारा निर्वाचन को संगठित करने का कार्य बहुत बड़ा कार्य है और ऐसा अन्य कोई देश नहीं है जहां इतने बड़े परिमाण में कभी निर्वाचन हुआ हो।

इस संबंध में मैं आपके सामने कुछ तथ्यों का वर्णन करूंगा। मोटे रूप में यह अनुमान लगाया गया है कि प्रांतों में की विधान सभाओं में 3800 सदस्यों से अधिक सदस्य होंगे और जिनका निर्वाचन उतने ही निर्वाचक क्षेत्रों में से या शायद कुछ कम क्षेत्रों में से होगा और फिर लोक सभा के लिये लगभग 500 सदस्य होंगे और राज्य-परिषद् के लिये लगभग 220 सदस्य। इस प्रकार हमें 4500 से अधिक सदस्यों के लिये निर्वाचन की व्यवस्था करनी होगी और देश को लगभग 4000 निर्वाचन-क्षेत्रों में विभाजित करना होगा। एक दिन मनोविनोद के रूप में मैं यह अनुमान लगा रहा था कि हमारी निर्वाचक सूची का क्या आकार प्रकार होगा। यदि आप फूल्स्केप नाप के एक पृष्ठ पर 40 नाम छापें तो सब मतदाताओं के नाम छापने के लिये हमें फूल्स्केप नाप के 20 लाख पृष्ठों की आवश्यकता होगी और यदि आप इन सबकी एक प्रति बनायें तो उस प्रति की मुटाई लगभग 200 गज़ होगी। केवल इसी एक बात से हमें यह अनुमान हो जाता है कि यह कार्य कितना विशाल है और इन सूचियों को अन्तिम रूप देने, निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन करने, मतदान करने के स्थलों को नियत करने और अन्य उन प्रबन्धों को करने में कितना काम बढ़ जाता है और यह सब अब से लेकर 1950-51 के शीत काल तक हो जाना चाहिये जिस समय के लिये यह आशा की जाती है कि निर्वाचन होंगे।

कुछ लोगों ने इस बात के प्रति संदेह किया है कि वयस्क मताधिकार बुद्धिमानी की बात होगी। यद्यपि मैं इसे एक ऐसे प्रयोग के रूप में देख रहा हूं जिसके परिणाम के सम्बन्ध में आज कोई भी व्यक्ति भविष्यवाणी नहीं कर सकता है पर मैं इससे आश्चर्य चकित नहीं हुआ हूं। मैं एक ग्रामीण व्यक्ति हूं और यद्यपि अपने कार्य के कारण मुझे बहुत अधिक समय तक नगरों में रहना पड़ा है परन्तु मेरी जड़ अब भी वहीं है। अत: मैं उन ग्रामीण व्यक्तियों से परिचित हूं जो इस महान निर्वाचक-मंडल का एक बड़ा भाग होगा। मेरी सम्मति में हमारे इन लोगों में बुद्धि और साधारण ज्ञान है। उनकी एक संस्कृति भी है जिसको आज की आधुनिकता में रंगे हुए लोग चाहे न समझें पर है वह एक ठोस संस्कृति। वे साक्षर नहीं हैं और पढ़ने लिखने का मंत्रवत् कौशल उनमें नहीं है। पर इस बात में मुझे रंचमात्र भी सन्देह नहीं है कि यदि उनको वस्तुस्थिति समझा दी जाये तो वे अपने हित तथा देश के हित के लिये उपक्रम कर सकते हैं। कुछ बातों में तो मैं वास्तव में उनको किसी भी कारखाने के श्रमिक से भी अधिक चतुर समझता हूं जो अपने व्यक्तित्व को खो देता है और जिस यंत्र का उसे संचालन करना पड़ता है न्यूनाधिक रूप से वह उसी यंत्र का एक भाग बन जाता है। अत: मेरे मन में इस बात के प्रति कोई सन्देह नहीं है कि यदि उनको वस्तुस्थिति समझा दी जाये तो वे केवल निर्वाचन की बारीकियों को ही नहीं समझेंगे बल्कि बुद्धिमानी पूर्वक अपना मत भी देंगे और इसलिये इनके कारण भविष्य के प्रति मुझे कोई शंका नहीं है। अन्य उन लोगों के प्रति मैं यह बात नहीं कह सकता हूं जो नारों द्वारा तथा उनके सामने अव्यावहारिक कार्यक्रमों के सुन्दर चित्र रखकर उन पर प्रभाव डालने का प्रयत्न करें। फिर भी मेरा यह विचार है कि उनका पुष्ट साधारण ज्ञान वस्तुस्थिति को ठीक-ठीक समझने में उनकी सहायता करेगा। अत: हम यह आशा कर सकते हैं कि हमारे विधान-मंडलों में ऐसे सदस्य होंगे जो वास्तविकता से परिचित होंगे और जो वस्तुस्थिति पर यथार्थ दृष्टिकोण से विचार करेंगे।

यद्यपि संसद् में द्वितीय सदन के लिये और कुछ राज्यों में द्वितीय सदन के लिये उपबन्ध बना दिया गया है, परन्तु सर्वोच्च स्थान लोक सभा का ही है। वित्त तथा धन सम्बन्धी सब विषयों में लोक सभा की सर्वोच्चता कितने ही शब्दों में निर्धारित की गई है। और अन्य विषयों में भी जहां उत्तर सदन को विधियों का सूत्रपात करने और पारित करने की समान शक्तियां कही जा सकती हैं वहां भी लोक सभा की सर्वोच्चता सुनिश्चित की गई है। जहां तक संसद का सम्बन्ध है यदि दोनों सदनों में मतभेद हो जाता है एक संयुक्त सत्र किया जा सकता है; पर संविधान यह उपबन्ध करता है कि राज्य-परिषद् के सदस्यों की संख्या लोक-सभा के सदस्यों की संख्या के 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी। अत: संयुक्त सत्र की दशा में भी लोक सभा की सर्वोच्चता का निर्वाह किया गया है जब तक कि स्वयं लोक सभा में ही बहुमत थोड़ा न हो जो वास्तव में एक ऐसी दशा हो जायेगी जिसमें उसकी सर्वोच्चता नहीं रहेगी। प्रान्तीय विधान मंडलों में यदि प्रथम सदन किसी विनिश्चय को दूसरी बार करता है तो वह विनिश्चय

[अध्यक्ष]

माना जायेगा। अत: उत्तर सदन कुछ समय के लिये विधेयकों में केवल विलम्बन कर सकता है, पर उन्हें रोक नहीं सकता। किसी विधान पर राष्ट्रपति या राज्यपाल को, यथास्थिति, अपनी अनुमति देनी होगी, पर यह अनुमति उसके मंत्रालय की मंत्रणा के आधार पर ही होगी जो अन्ततोगत्वा लोक-सभा के प्रति उत्तरदायी है। अत: लोक-सदन में जनता के प्रतिनिधियों द्वारा व्यक्त किये गये रूप में जनता की इच्छा ही अन्त में सब विषयों का निश्चय करेगी। द्वितीय सदन और राष्ट्रपति या राज्यपाल केवल पुनर्विचार के लिये निदेश दे सकते हैं और कुछ विलम्ब कर सकते हैं; परन्तु यदि लोक सभा दृढ़ है तो संविधान के अधीन उसे सफलता मिलेगी। अत: समूचे देश की सरकार, दोनों केन्द्र में तथा प्रान्तों में, जनता की इच्छा पर निर्भर होगी जो दिन प्रति दिन विधान-मंडलों में उसके प्रतिनिधियों द्वारा व्यक्त हुआ करेगी और कभी कभी साधारण निर्वाचनों में प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा व्यक्त होगी।

संविधान में हमने एक न्यायपालिका की व्यवस्था की है जो स्वाधीन होगी। उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त करने के लिये इससे अधिक कुछ और सुझाव देना कठिन है। अवर न्यायपालिका को भी किसी बाह्य या असम्बद्ध प्रभाव से मुक्त रखने का संविधान में प्रयास किया गया है। हमारा एक अनुच्छेद राज्य की सरकरों के लिये कार्यपालिका के कृत्यों को न्यायिक कृत्यों से पृथक करने के विषय को प्रस्तुत करने के कार्य को सरल कर देता है और उस दण्डाधिकारी न्यायालय को, जो आपराधिक मामलों पर विचार करता है, व्यवहार-न्यायालयों के आधार पर लाने के कार्य को सरल कर देता है मैं केवल यही आशा प्रकट कर सकता हूं कि यह सुधार, जो बहुत समय पूर्व हो जाना चाहिये था तथा राज्यों में तुरन्त कर दिया जायेगा।

कुछ विशेष विषयों को निपटाने के लिये हमारे संविधान में कुछ स्वाधीन अभिकरणों की योजना की गई है। अत: इसमें दोनों संघ और राज्यों के लिये लोक सेवा आयोगों की व्यवस्था की गई है और इन आयोगों को स्वतंत्र आधार पर रखा है जिससे कि कार्यपालिका से प्रभावित हुए बिना ये अपने कर्तव्य का निर्वहन कर सकें। एक बात जिससे हमें बचना है वह यह है कि जहां तक माननीय रूप में सम्भव हो सकता है स्वार्थ साधन, कुल-पोषण और पक्षपात के लिये कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिये। मेरा विचार है कि जिन उपबन्धों को हमने अपने संविधान में पुर:स्थापित किया है वे इस दशा में बड़े सहायक होंगे।

एक और स्वाधीन प्राधिकारी नियंत्रण-महालेखा परीक्षक है जो हमारी वित्त व्यवस्था की देखभाल करेगा और इस बात पर ध्यान रखेगा कि भारत या किसी भी राज्य के आगमों के किसी अंश का बिना समुचित प्राधिकार के किसी प्रयोजनों या मदों के लिये उपयोग न हो और जिसका यह कर्तव्य होगा कि वह हमारे हिसाब-किताब को ठीक रखे। जब हम इस बात पर विचार करें कि हमारी सरकार को अरबों

में काम करना होगा तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विभाग कितना महत्वपूर्ण और आवश्यक होगा। हमने एक और महत्वपूर्ण प्राधिकारी की व्यवस्था की है अर्थात् निर्वाचन-आयुक्त जिसका कार्य विधान मंडलों के निर्वाचनों का संचालन तथा निरीक्षण करना होगा और इस सम्बन्ध में अन्य आवश्यक कार्रवाई करनी होगी। एक संकट जिसका हमें सामना करना होगा वह किसी ऐसे भ्रष्टाचार से उत्पन्न होता है जिसका शायद पक्ष, अभ्यर्थी या शक्ति प्राप्त सरकार आचरण कर बैठे। हमें एक दीर्घ काल से लोकतंत्रात्मक निर्वाचनों का कोई अनुभव प्राप्त नहीं है सिवा पिछले कुछ वर्षों के बारे अब जब कि हमें यथार्थ शक्ति प्राप्त हो गई है भ्रष्टाचार का संकट केवल काल्पनिक मात्र ही नहीं है। अत: यह बात ठीक ही है कि हमारा संविधान इस संकट के प्रति सतर्क है और मतदाताओं द्वारा एक ठीक तथा यथार्थ निर्वाचन के लिये उपबन्ध करता है। विधान-मंडल, उच्च न्यायालयों, लोक-सेवा आयोग, नियंत्रक-महालेखा-परीक्षक और निर्वाचन आयुक्त के विषय में जो कर्मचारी वृन्द इनको इनके कार्य में सहायता प्रदान करेगा उस कर्मचारी वृन्द को भी इनके नियंत्रण ही में रख दिया है और अधिकांश विषयों में उनकी नियुक्ति, पदवृद्धि और अनुशासन उनकी अपनी-अपनी विशिष्ट संस्थाओं में निहित है और इस प्रकार उनकी स्वाधीनता के लिये और भी अधिक रक्षाकवच दे दिये गये हैं।

इस संविधान की दो अनुसूचियों में अर्थात् 5 और 6 अनुसूचियों में अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण के लिये विशेष उपबन्ध रखे गये हैं। आसाम को छोड़कर अन्य राज्यों में की जनजातियों के और जनजाति-क्षेत्रों के विषय में जनजाति मंत्रणादात्री परिषद् के द्वारा जन-जातियां प्रशासन पर प्रभाव डाल सकेंगी। आसाम की जनजातियों के और जनजाति क्षेत्रों के विषय में जिला परिषदों और स्वायत्त शासी प्रादेशिक परिषदों के द्वारा उनको अधिक व्यापक शक्तियां दे दी गई हैं। राज्य मंत्रालयों में एक मंत्री के लिये भी आगे और उपबन्ध है जिस पर जन-जातियों और अनुसूचित जातियों के कल्याण का भार होगा और एक आयोग उस रीति के बारे में प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा जिसके अनुसार इन क्षेत्रों पर प्रशासन किया जाता है। इस उपबन्ध का बनाना इस कारण आवश्यक था कि जनजातियां पिछड़ी हुई हैं और उनको रक्षा की आवश्यकता है और इस कारण भी कि अपनी समस्याओं को सुलझाने की उनकी अपनी ही रीति है और जन-जातिवत् जीवन बिताने का उसका अपना ढंग है। इन उपबन्धों ने उनको पर्याप्त संतोष प्रदान किया है जैसे कि अनुसूचित जातियों के कल्याण और रक्षण के उपबन्धों ने उनको संतोष दिया है।

संघ और राज्यों के प्रशासी तथा अन्य कार्यों के सब रूपों में संघ और राज्यों में परस्पर शक्ति तथा प्रकार्यों के विभाजन संबंधी विषय को इस सविधान में बड़े विवरण पूर्ण ढंग से लिया गया है। कुछ लोगों ने यह कहा है कि जो शक्तियां

[अध्यक्ष]

केन्द्र को दी गई हैं वे बहुत अधिक हैं और बहुत ही व्यापक हैं और राज्यों को उस शक्ति से वंचित कर दिया है जो उनके अपने क्षेत्र में वास्तव में उनकी ही होनी चाहिये थी। इस आलोचना पर मैं कोई निर्णय देना नहीं चाहता हूं और केवल यही कह सकता हूं कि अपने भविष्य के प्रति हम आवश्यकता से अधिक सतर्क नहीं हो सकते हैं विशेषकर जब हम इस देश के कई शताब्दियों के इतिहास को याद रखें। पर वे शक्तियां जो केन्द्र को राज्यों के क्षेत्र के अन्तर्गत कार्रवाई करने के लिये दी गई हैं वे केवल आपात सम्बन्धी हैं जो चाहे राजनैतिक हो या वित्तीय और आर्थिक आपात हो, और मुझे यह आशा नहीं है कि केन्द्र की ओर से उस शक्ति की अपेक्षा और अधिक शक्ति हथियाने की प्रवृत्ति होगी जो इस समूचे देश के सुप्रशासन के लिये आवश्यक है। किसी दशा में भी केन्द्रीय विधान-मंडल में राज्यों के प्रतिनिधि होंगे और जब तक उनको यह विश्वास नहीं होगा कि उनपर अतिक्रमण करने की आवश्यकता है तब तक इस बात की संभावना नहीं हो सकती कि वे उन राज्यों के विरुद्ध जिनकी जनता के वे प्रतिनिधि हैं केन्द्रीय कार्यपालिका द्वारा किसी ऐसी शक्ति के प्रयोग से सहमत हो जायें। मैं इस शिकायत को कोई महत्व नहीं देता हूं कि अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र को सौंप दी गई हैं। सप्तम अनुसूची की तीन सूचियों में शक्तियों की बड़े व्यापक तथा विस्तृत रूप में परिभाषित तथा सीमांकित कर दिया गया है और जो कुछ भी अवशेष रह गई हों उनके अन्तर्गत किसी बड़े क्षेत्र के आने की सम्भावना नहीं है और इस कारण इन अवशिष्ट शक्तियों के सौंपने का अभिप्राय यह नहीं है कि जो शक्तियां राज्यों की होनी चाहियें उनका वास्तव में बहुत अधिक अल्पीकरण कर दिया गया हो।

उन समस्याओं में से एक समस्या जिनके सुलझाने में संविधान सभा ने बहुत समय लिया देश के राजकीय प्रयोजनों के लिये भाषा सम्बन्धी समस्या है। यह एक स्वभाविक इच्छा है कि हमारी अपनी भाषा होनी चाहिये और देश में बहुत सी भाषाओं के प्रचलित होने के कारण कठिनाइयों के होते हुए भी हम हिन्दी को अपनी राज भाषा के रूप में स्वीकार कर सके हैं जो एक ऐसी भाषा है जिसे देश में सबसे अधिक लोग समझते हैं। जब हम यह विचार करते हैं कि स्विट्जरलैंड जैसे एक छोटे से देश में तीन राजभाषाओं से कम राज भाषा नहीं हैं और दक्षिणी अफ्रीका में दो राजभाषाएं हैं तो मैं इस विनिश्चय को एक बड़े ही महत्वपूर्ण विनिश्चय के रूप में देखता हूं। देश को एक राष्ट्र के रूप में संघटित करने के दृढ़ निश्चय की ओर सुविधा-क्षमता की भावना इस बात से प्रकट होती है कि वे लोग जिन की भाषा हिन्दी नहीं है उन्होंने स्वेच्छापूर्वक इसे राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार किया है (*तालियां*)। अब भाषा के आरोपण करने का प्रश्न ही नहीं है। अंग्रेज़ी राज्य में अंग्रेज़ी और मुस्लिम राज्य में फारसी कचहरी और राज की भाषायें थीं। यद्यपि लोगों ने इन भाषाओं का अध्ययन किया और

उनमें विशेष योग्यता प्राप्त की, पर कोई यह दावा नहीं कर सकता है कि उनको इस देश के अधिकांश लोगों ने स्वेच्छापूर्वक ग्रहण किया। अपने इतिहास में पहली बार इस समय हमने एक भाषा स्वीकार की है जिसका समस्त राजकीय प्रयोजनों के लिये सारे देश में प्रयोग होगा और मुझे यह आशा करने दीजिये कि यह उन्नत होकर एक ऐसी राष्ट्रीय भाषा का रूप धारण करे जिसमें सबको समान रूप से गौरव मिले, और इसके साथ-साथ प्रत्येक क्षेत्र को अपनी निजी भाषा की उन्नति करने की स्वतन्त्रता ही नहीं होगी वरन् उसको उस भाषा को उन्नत बनाने के लिये प्रोत्साहित भी किया जायेगा जिसमें उसकी संस्कृति और परम्परा पवित्र रूप से स्थापित है। व्यावहारिक कारणों वश इस अन्तर्कालीन समय में अंग्रेजी का प्रयोग अनिवार्य समझा गया और इस विनिश्चय से किसी को निराश नहीं होना चाहिये जिसको विशुद्ध व्यावहारिक विचारों के आधार पर किया गया है। अब यह इस समूचे देश का कर्तव्य है और विशेष कर उनका जिनकी भाषा हिन्दी है कि इसको ऐसा रूप दें और इस प्रकार से विकसित करें कि यह एक ऐसी भाषा बन जाये जिसमें भारत की सामाजिक संस्कृति की पर्याप्त तथा सुन्दर रूप में अभिव्यक्ति हो सके।

हमारे संविधान की और महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें किसी अधिक कष्ट के बिना संशोधन किया जा सकता है। यहां तक कि संविधानिक संशोधन भी ऐसे कठिन नहीं हैं जैसे कुछ अन्य देशों में हैं। और इस संविधान में के बहुत से उपबन्धों का संशोधन तो साधारण अधिनियमों द्वारा संसद कर सकती है और संविधानिक संशोधनों के लिये निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक नहीं है। इस समय एक ऐसा उपबन्ध रखा गया था जिसमें यह प्रस्थापित किया गया था कि इस संविधान के प्रवृत्त होने के बाद पांच वर्ष तक इसमें संशोधन करना सरल बना दिया जाये पर इस कारण ऐसा उपबन्ध अनावश्यक हो गया कि इस संविधान में संविधानिक संशोधनों के लिये निर्धारित प्रक्रिया के बिना संशोधन करने के लिये अनेक अपवाद रख दिये गये हैं। समष्टि रूप से हम एक ऐसा संविधान बना सके हैं जो मेरा विश्वास है कि देश के लिये उपयुक्त सिद्ध होगा।

हमारे निदेशक सिद्धान्तों में एक विशिष्ट उपबन्ध है जिसको मैं बहुत महत्व देता हूं। हमने केवल अपने लोगों की भलाई के लिये ही उपबन्ध नहीं बनाये हैं वरन् अपने निदेशक तत्वों में हमने यह निर्धारित किया है कि राज्य अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की उन्नति का, राष्ट्रों के बीच न्याय और सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाये रखने का, अन्तर्राष्ट्रीय विधि और सन्धि बन्धनों के प्रति आदर बढ़ाने का और अन्तर्राष्ट्रीय विवादों में मध्यस्थता द्वारा निबटारे के लिये प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा। संघर्षों से जर्जरित संसार में, एक ऐसे संसार में जो दो विश्व युद्धों के संहार के पश्चात् अब भी शान्ति और सद्भावना स्थापित करने के लिये शस्त्रीकरण में विश्वास कर रहा है, यदि हम राष्ट्रपिता की शिक्षाओं का सच्चे

[अध्यक्ष]

रूप में पालन करें और अपने संविधान के इस निदेशक तत्व पर चलें कि यह निश्चित है कि हम अवश्य ही एक महान् कार्य करने में सफल होंगे। इन कठिनाइयों के होते हुए भी जो हमें घेरे हुये हैं और एक ऐसे वातावरण के होते हुए भी जो हमारा मार्ग भली प्रकार रोक सकता है हे ईश्वर! तू हमें इस मार्ग पर चलने की सद्बुद्धि और शक्ति दे। हम स्वयं अपने में और उस स्वामी की शिक्षाओं में विश्वास रखें जिसका चित्र मेरे सर पर टंगा हुआ है और केवल अपने देश की ही नहीं वरन् इस सारे संसार की आशाओं को हम पूरा करेंगे और केवल अपने देश के ही नहीं वरन् सारे संसार के सर्वोत्तम हितों के प्रति हम सच्चे सिद्ध होंगे।

मैं उस आलोचना के प्रति कुछ नहीं कहना चाहता हूं जो विशेषकर मूलाधिकारों संबंधी भाग में के उन अनुच्छेदों के सम्बन्ध में है जिनके द्वारा परमाधिकारों को कम कर दिया गया है और जो उन अनुच्छेदों के सम्बन्ध में है जो आपात शक्तियों के विषय में है। अन्य सदस्यों ने इन आपत्तियों पर विस्तारपूर्वक विचार प्रकट किया है। इस समय मुझे केवल यही कहना है कि देश की वर्तमान दशा और जो प्रवृत्तियां स्पष्ट दिखाई दे रही हैं उन्होंने इन उपबन्धों को आवश्यक बना दिया है और ये उपबन्ध अन्य देशों के अनुभव पर आधृत हैं जिनको उन देशों ने न्यायिक विनिश्चयों द्वारा प्रवृत्त किया, यद्यपि इन उपन्धों की व्यवस्था उनके संविधान में नहीं थी।

ऐसी केवल दो खेद की बातें हैं जिनमें मुझे माननीय सदस्यों का साथ देना चाहिये। विधान मंडल के सदस्यों के लिये कुछ अर्हतायें निर्धारित करना मैं पसंद करता। यह बात असंगत हैं कि उन लोगों के लिये हम उच्च अर्हताओं का आग्रह करें जो प्रशासन करते हैं या विधि के प्रशासन में सहायता देते हैं और उनके लिये हम कोई अर्हता न रखें जो विधि का निर्माण करते हैं सिवा इसके कि उनका निर्वाचन हो। एक विधि बनाने वाले के लिये बौद्धिक उपकरण अपेक्षित हैं और इससे भी अधिक वस्तुस्थिति पर संतुलित विचार करने की स्वतंत्रता-पूर्वक कार्य करने की सामर्थ्य की आवश्यकता है और सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि जीवन के उन आधारभूत तत्वों के प्रति सच्चाई हो—एक शब्द में यह कहना चाहिये कि चरित्रबल हो (*वाह, वाह*)। यह संभव नहीं है कि व्यक्ति के नैतिक गुणों को मापने के लिये कोई मापदण्ड तैयार किया जा सके और जब तक यह संभव नहीं होगा तब तक हमारा संविधान दोषपूर्ण रहेगा। दूसरा खेद इस बात पर है कि हम किसी भारतीय भाषा में स्वतंत्र भारत का अपना प्रथम संविधान नहीं बना सके। दोनों मामलों में कठिनाइयां व्यावहारिक थीं और अविजेय सिद्ध हुई। पर इस विचार से खेद में कोई कमी नहीं हो जाती है।

हमने एक लोकतन्त्रात्मक संविधान तैयार किया है। पर लोकतंत्रात्मक सिद्धान्तों के सफल क्रियाकरण के लिये उन लोगों में, जो इन सिद्धान्तों को कार्यान्वित करेंगे,

अन्य लोगों के विचारों के सम्मान करने की तत्परता और समझौता करने तथा श्रेय देने के लिये सामर्थ्य आवश्यक है। बहुत सी बातें जो संविधान में नहीं लिखी जा सकती हैं अभिसमयों द्वारा की जाती हैं। मुझे यह आशा करने दीजिये कि हममें ये योग्यतायें होंगी और इन अभिसमयों का हम विकास करेंगे। मतदान तथा सभाकक्षों (लॉबी) में मत विभाजन की शरण लिये बिना जिस रीति से हम यह संविधान बना सके हैं वह इस आशा को प्रबल बनाती है।

यह संविधान किसी बात के लिये उपबन्ध करे या न करे, देश का कल्याण उस रीति पर निर्भर करेगा जिसके अनुसार देश का प्रशासन किया जायेगा। देश का कल्याण उन व्यक्तियों पर निर्भर करेगा जो देश पर प्रशासन करेंगे। यह एक पुरानी कहावत है कि देश जैसी सरकार के योग्य होता है वैसी ही सरकार उसे प्राप्त होती है।

हमारे संविधान में ऐसे उपबन्ध हैं जो किसी न किसी रूप में कुछ लोगों को आपत्तिजनक प्रतीत होते हैं। हमें यह मान लेना चाहिये कि दोष तो अधिकतर स्वयं देश की परिस्थिति और जनता में है। जिन व्यक्तियों का निर्वाचन किया जाता है यदि वह योग्य, चरित्रवान ओर ईमानदार हैं तो वे एक दोषपूर्ण संविधान को भी सर्वोत्तम संविधान बना सकेंगे। यदि उनमें इन गुणों का अभाव होगा तो यह संविधान देश की सहायता नहीं कर सकेगा। आखिर संविधान एक यंत्र के समान एक निष्प्राण वस्तु ही तो है। उसके प्राण तो वे लोग हैं जो उस पर नियंत्रण रखते हैं और उसका प्रवर्तन करते हैं और देश को आज तक ऐसे ईमानदार लोगों के वर्ग से अधिक किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता नहीं है जो अपने सामने देश के हित को रखें। हमारे जीवन में भिन्न-भिन्न तत्वों के कारण भेदमूलक प्रवृत्तियां पैदा हो जाती हैं। हममें साम्प्रदायिक भेद हैं, जातिगत भेद हैं, भाषा के आधार पर भेद हैं, प्रान्तीय भेद हैं और इसी प्रकार के अन्य भेद हैं। इसके लिये ऐसे दृढ़ चरित्र व्यक्तियों की, ऐसे दूरदर्शी लोगों की और ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है जो छोटे-छोटे समूहों और क्षेत्रों के लिये पूरे देश के हितों का परित्याग न करें और जो इन भेदों से उत्पन्न हुए पक्षपात से परे हों। हम केवल यह आशा ही कर सकते हैं कि इस देश में ऐसे लोग बहुत मिलेंगे। स्वतंत्रता आन्दोलन के समय जो संघर्ष हमने लिया था उसके अनुभव के आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि नये अवसरों ने नये व्यक्तियों को जन्म दिया; केवल एक बार ही नहीं बल्कि प्रत्येक बार जब कि कांग्रेस के नेताओं को यकायक जेल में बन्द कर दिया गया और उनको इस बात का भी समय नहीं मिला कि वे दूसरों को कुछ हिदायतें दे जाते और अपना युद्ध जारी रखने की योजना बना जाते, जनता में से ऐसे व्यक्ति निकले जिन्होंने उन संघर्षों का इस योग्यता, सूझ और संगठन-शक्ति सहित चालन किया और उनको जारी रखा कि किसी भी व्यक्ति को यह आशा न थी कि उनमें ऐसे गुण होंगे। इस बात में मुझे सन्देह नहीं है कि जब देश को चरित्रवान व्यक्तियों की आवश्यकता होगी तो ऐसे व्यक्ति मिलेंगे

[अध्यक्ष]

और जनता ऐसे व्यक्तियों को पैदा करेगी। जो लोग पहले से सेवा करते चले आ रहे हैं वे यह कहकर अपनी पतवार न डाल दें कि वे अपना सेवा-कार्य समाप्त कर चुके हैं और अब वह समय आ गया है कि वे अपने श्रमलाभ का उपभोग करें। जो मनुष्य सच्चे हृदय से अपने कार्य में संलग्न रहता है उसके लिये ऐसा कोई समय नहीं आता है। मैं समझता हूं कि भारतवर्ष में आज जो कार्य हमारे सन्मुख है वह उस कार्य से भी अधिक कठिन है जो उस समय हमारे सन्मुख था जबकि हम संघर्ष में लगे हुए थे। उस समय हमारे सामने ऐसी कोई विरोधी मांगें नहीं थीं जिनमें परस्पर मेल बिठाना हो, दाल रोटी का प्रश्न नहीं था और शक्तियों को बांटने की बात नहीं थी। इस समय हमारे सामने ये सब बातें हैं और बड़े-बड़े प्रलोभन भी हैं। ईश्वर करे इन प्रलोभनों से ऊपर उठने की और उस देश की सेवा करने की जिसको हमने आजाद किया है बुद्धि और शक्ति हममें हो।

अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये जिन साधनों को अपनाना होता है उनकी पवित्रता पर महात्मा गांधी ने जोर दिया था। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि यह शिक्षा चिरस्थायी है और यह केवल संघर्ष काल के लिये ही नहीं थी वरन आज भी इसका उतना ही प्राधिकार तथा मूल्य है जितना पहले था। यदि कोई काम गलत हो जाता है तो हमारी यह प्रवृत्ति है कि हम दूसरों को दोष देते हैं परन्तु अन्तर्परीक्षण कर यह देखने का प्रयास नहीं करते कि हमारा दोष है या नहीं। यदि कोई व्यक्ति अपने कर्मों और उद्देश्यों का विवेचन करना चाहे तो दूसरों के कर्मों और उद्देश्यों को सही-सही जानने की अपेक्षा अपने कर्मों और उद्देश्यों का विवेचन करना बहुत सरल है। मैं यही आशा करूंगा कि वे सब लोग जिन को भविष्य में इस संविधान को कार्यान्वित करने का सौभाग्य प्राप्त होगा, यह याद रखेंगे कि वह एक असाधारण विजय थी जिसको हमने राष्ट्रपिता द्वारा सिखाई गई अनोखी रीति से प्राप्त किया था और जो स्वाधीनता हमने प्राप्त की है उसकी रक्षा करना और उसको बनाये रखना और जनसाधारण के लिये उसको उपयोगी बनाना उन पर ही निर्भर करता है। विश्वास पूर्वक सत्य तथा अहिंसा के आधार पर और तब से अधिक यह कि हृदय में साहस धारण कर और ईश्वर में विश्वास कर हम अपने स्वाधीन गणराज्य के संचालन करने के इस नये कार्य में संलग्न हों।

समाप्त करने से पूर्व इस महान सभा के सब सदस्यों के प्रति मुझे अपनी कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये जिन्होंने मेरे साथ केवल विनम्र व्यवहार ही नहीं किया बल्कि मैं यह कहूंगा कि उन्होंने सम्मानपूर्ण तथा प्रेमपूर्ण व्यवहार किया। इस कुर्सी पर बैठे बैठे दिन प्रतिदिन की कार्रवाई देखते हुए मैंने जो अनुभव किया है वह कोई भी अन्य व्यक्ति नहीं कर सकता कि मसौदा समिति के सदस्यों ने और अपना स्वास्थ्य खराब होने पर भी उसके सभापति डॉ. अम्बेडकर ने कितने उत्साह और लगन के साथ कार्य किया है (*तालियां*)। हम कोई ऐसा विनिश्चय नहीं कर

सकते थे जो कभी भी इतना ठीक हो सकता था जितना कि वह जब हुआ जब कि हम ने डॉ. अम्बेडकर को मसौदा समिति में सम्मिलित किया और उसका सभापति बनाया। उन्होंने अपने चुनाव को ही न्याययुक्त सिद्ध नहीं किया वरन् जो कार्य उन्होंने किया है उसमें चार चांद लगा दिये हैं। इस सम्बन्ध में समिति के अन्य सदस्यों में परस्पर भेद विभेद करना अस्याजनक होगा। मैं जानता हूं कि उन सबों ने उतने ही साहस और उतनी ही लगन के साथ कार्य किया जितना उसके सभापति ने और वे देश की कृतज्ञता के पात्र हैं।

यदि आप मुझे अनुज्ञा दें तो मैं अपनी ओर से तथा इस सभा की ओर से भी अपने संविधानिक परामर्शदाता श्री बी.एन. राउ को धन्यवाद दूं जिन्होंने उस सारे समय में जब कि वे यहां रहे अवैतनिक रूप में कार्य किया और अपने उच्च ज्ञान से इस सभा को ही सहायता न दी वरन् अन्य सदस्यों को भी वह सामग्री देकर, जिसके आधार पर वे कार्य कर सकते थे, पूर्ण रूप से योग्यतापूर्वक अपने कर्तव्य पालन करने में उनको सहायता दी। इस कार्य में उनकी अनुसंधानकों तथा अन्य कर्मचारियों ने सहायता दी जिन्होंने उत्साह और लग्न के साथ कार्य किया। श्री एस.एन. मुखर्जी की प्रशंसा सही की गई है जिन्होंने मसौदा समिति की बहुत ही अमूल्य सहायता की।

संविधान सभा के सचिवालय के कर्मचारियों के सम्बन्ध में सर्वप्रथम मैं सचिव श्री एच.वी.आर. आयंगर का उल्लेख करूंगा और उनको धन्यवाद दूंगा जिन्होंने सचिवालय का एक कुशल कार्य करने वाले निकाय के रूप में संगठन किया। यद्यपि बाद में जबकि कार्य न्युनाधिक रूप में यंत्र चालित नियमित्ता के रूप में चलने लगा तो हम उनको कुछ कर्त्तव्यों से मुक्त कर सके जिससे कि वे दूसरा कार्य हाथों में ले सकें पर वे हमारे सचिवालय के या संविधान सभा के कार्य के सम्पर्क से कभी भी अलग नहीं हुए।

हमारे उप-सचिव श्री जुगलकिशोर खन्ना के अधीन कर्मचारियों ने योग्यता तथा श्रद्धापूर्वक कार्य किया। उनके कार्य पर सदैव ध्यान नहीं दिया जा सकता था चूंकि वह कार्य इस सभा के सदस्यों की दृष्टि से ओझल होता था। पर मुझे विश्वास है कि उनकी कार्य क्षमता और कार्य के प्रति श्रद्धा की जो कई सदस्यों ने प्रशंसा की है वह पूर्णतया उनके अनुकूल है। हमारे प्रतिवेदकों ने अपना कार्य इस रीति से किया है कि उनको उस कार्य का श्रेय अवश्य प्राप्त होगा और उनके कार्य से सभा की कार्रवाई के अभिलेख के रक्षण में सहायता मिली है और ये कार्रवाई बड़ी लम्बी तथा कष्टदायक रही। मैं अनुवादकों का उल्लेख करूंगा और माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता के सभापतित्व में अनुवाद समिति का भी उल्लेख करूंगा जिसे संविधान में प्रयुक्त अंग्रेज़ी शब्दों के हिन्दी पर्याय खोजने का कठिन कार्य करना पड़ा। इस समय वे भाषा विज्ञों की समिति की सहायता में लगे हुए हैं

[अध्यक्ष]

जो एक शब्दावलि तैयार कर रही है जो संविधान तथा विधि में प्रयुक्त अंग्रेज़ी शब्दों के पर्याय के रूप में सब भाषाओं को स्वीकार्य होगी। देख-रेख करने वाले पदाधिकारियों ने, आरक्षी दल ने और मार्शल ने, यद्यपि इन का नाम अन्त में है पर इससे इनका महत्व कम नहीं होता है संतोषजनक कार्य किया है (*तालियां*)। चपरासियों और छोटे पदों पर के लोगों को मुझे भुला नहीं देना चाहिये। उन सबों ने अपनी ओर से भरसक कार्य किया है। ये सब मुझे इस लिये कहना आवश्यक है कि संविधान-निर्माण कार्य के समाप्त होने के साथ साथ इनमें से अधिकांश व्यक्ति जो अस्थाई रूप में कार्य कर रहे हैं यदि उनको अन्य विभागों या मंत्रालयों में नहीं लिया जायेगा तो वे नौकरी से अलग हो जायेंगे। मुझे यह पूर्ण आशा है कि उन सबको ले लिया जायेगा (*वाह, वाह*) क्योंकि उनको पर्याप्त अनुभव है और ये लोग मन लगाकर कार्य करने वाले तथा कुशल कर्मचारी हैं। क्योंकि इन सबसे मुझे विनय, सहयोग और भक्ति पूर्ण सेवा प्राप्त हुई है अतः इन सबका मैं कृतज्ञ हूं।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा जो प्रस्ताव पेश किया गया था उस पर अब सभा का मत लेना शेष रह गया है।

प्रश्न यह है:

"कि इस सभा द्वारा निश्चित किये गये रूप में यह संविधान पारित किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया (देर *तक तालियां*)।

***अध्यक्ष:** अब मुझे इस विधेयक पर औपचारिक रूप में हस्ताक्षर करने हैं जो अपनी प्रमाणिकता प्राप्त करने पर एक अधिनियम बन गया है जिससे कि उसे शीघ्र प्राधिकार मिल जाये और वह शीघ्र प्रवृत्त हो सके।

***डॉ. रघुबीर:** क्या आपके हस्ताक्षर हिन्दी में होंगे?

***अध्यक्ष:** आप यह सवाल क्यों कर रहे हैं?

इसके पश्चात् अध्यक्ष ने संविधान को प्रमाणित किया।

***अध्यक्ष:** सभा स्थगित होने से पूर्व एक औपचारिक कार्य करना है और वह यह है कि जनवरी में इस सभा का एक और सत्र निमंत्रित करने का मुझे प्राधिकार दिया जाये।

***श्री सत्यनरायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"यह संकल्प किया कि संविधान सभा 26 जनवरी सन् 1950 ई. की किसी ऐसी तिथि तक स्थगित हो जिसे अध्यक्ष नियत करे।"

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"यह संकल्प किया कि संविधान सभा 26 जनवरी सन् 1950 ई. तक की किसी ऐसी तिथि तक स्थगित हो जिसे अध्यक्ष नियत करे।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** स्थगित होने से पूर्व मैं, उसी प्रकार से हाथ मिलाउंगा जैसा कि मैंने, जब कि आपने इस पद के लिये मुझे पहले चुना था, सबके पास जाकर हाथ मिलाया था।

***माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान, एक एक करके हम आपके पास आयेंगे और हाथ मिलायेंगे।

(इसके पश्चात् एक-एक करके माननीय सदस्यों ने अध्यक्ष से हाथ मिलाया।)

***अध्यक्षः** सभा अनिश्चित तिथि तक स्थगित हुई।

इसके पश्चात् सभा 26 जनवरी सन् 1950 ई. की किसी ऐसी तिथि तक के लिये स्थगित हुई जिसे अध्यक्ष नियत करेंगे।

———————

GIPD–HS-347BPSD–2-1-53–320.